राजनीतिक दल

परिचय

लोकतंत्र की अपनी इस यात्रा में हमने कई बार राजनीतिक दलों की चर्चा की है। कक्षा 9 में हमने देखा था कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था को बनाने, संविधान रचने, चुनावी राजनीति और सरकार के गठन तथा संचालन में राजनीतिक दलों की भूमिका होती है । इस पाठ्यपुस्तक में हमने राजनीतिक दलों की सत्ता के बँटवारे के वाहक और लोकतांत्रिक राजनीति में सामाजिक समूहों की तरफ़ से मोल-तोल करने वाले माध्यम के रूप में चर्चा की है। इस यात्रा को समाप्त करने से पहले, आइए, राजनीतिक दलों की प्रकृति और कामकाज के बारे में करीब से जानने की कोशिश करें – खासकर अपने देश के राजनीतिक दलों के बारे में । हमें दलों की ज़रूरत क्यों है ? लोकतंत्र के लिए कितने दलों का होना बेहतर है ? इसी संदर्भ में हम मौजूदा समय के राष्ट्रीय और क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का परिचय देंगे और साथ ही यह देखने का प्रयास करेंगे कि राजनीतिक दलों के साथ क्या खामियाँ जुड़ी हैं और उन्हें दूर करने के लिए क्या किया जा सकता है।

अध्याय 6

© NCERT not to be republished

राजनीतिक दलों की ज़रूरत क्यों?

...तो, आप मुझसे सहमत हैं कि दल पक्षपाती होते हैं; भेदभाव और फूट डालते हैं। दल लोगों को बाँटने के अलावा और कुछ नहीं करते! यही उनका असली काम है!

किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की संस्थाओं में राजनीतिक दल अलग से दिखाई देते हैं। अधिकतर आम नागरिकों के लिए लोकतंत्र का मतलब राजनीतिक दल ही है। अगर आप देश के दूर-दराज के और ग्रामीण इलाकों में जाएँ और कम पढ़े-लिखे लोगों से बात करें तो संभव है कि आपको ऐसे लोग मिलें जिन्हें संविधान के बारे में या सरकार के स्वरूप के बारे में कुछ भी मालूम न हो । बहरहाल, राजनीतिक दलों के बारे में उन्हें ज़रूर कुछ न कुछ मालूम होता है। लेकिन पार्टियों के बारे में हर कोई कुछ न कुछ जानता है तो इसका मतलब यह नहीं कि पार्टियाँ बहुत लोकप्रिय हैं। अधिकतर लोग आम तौर पर दलों के बारे में खराब राय रखते हैं। अपनी लोकतांत्रिक व्यवस्था और राजनीतिक जीवन की हर बुराई के लिए वे दलों को ही ज़िम्मेवार मानते हैं। सामाजिक और राजनीतिक विभाजनों के लिए भी दलों को ही दोषी माना जाता है।

ऐसे में यह सवाल स्वाभाविक रूप से उठता है : क्या हमें सचमुच राजनीतिक दलों की ज़रूरत है? करीब 100 साल पहले दुनिया के बस कुछ ही देशों में और वह भी गिनती के राजनीतिक दल थे। आज गिनती के ही देश ऐसे हैं जहाँ राजनीतिक दल नहीं हैं। दुनिया-भर के लोकतांत्रिक देशों में राजनीतिक दल इतने सर्वव्यापी क्यों हो गए? आइए, सबसे पहले इस सवाल का जवाब दें कि राजनीतिक दल क्या हैं और वे क्या करते हैं। उनकी ज़रूरत पर चर्चा इसके बाद होगी।

1

2

(1) एम. गोवर्द्धन (2) ए. मुरलीधरन (3) एम. मूर्ति (4) टी. सिंगरवेलु, द हिंदू

चुनाव आयोग ने चुनाव के समय दीवार-लेखन पर रोक लगा दी है। अधिकांश दलों का कहना है कि यह चुनाव प्रचार का सबसे सस्ता तरीका था। चुनाव के समय दीवारों का नज़ारा देखने लायक होता था। यहाँ तमिलनाडु से दीवार-लेखन के कुछ उदाहरण दिए गए हैं।

राजनीतिक दल का अर्थ

राजनीतिक दल को लोगों के एक ऐसे संगठित समूह के रूप में समझा जा सकता है जो चुनाव लड़ने और सरकार में राजनीतिक सत्ता हासिल करने के उद्देश्य से काम करता है। समाज के सामूहिक हित को ध्यान में रखकर यह समूह कुछ नीतियाँ और कार्यक्रम तय करता है। सामूहिक हित एक विवादास्पद विचार है। इसे लेकर सबकी राय अलग-अलग

3

4

आर के लक्ष्मण–ब्रशिंग अप द इयर्स

होती है। इसी आधार पर दल लोगों को यह समझाने का प्रयास करते हैं कि उनकी नीतियाँ औरों से बेहतर हैं। वे लोगों का समर्थन पाकर चुनाव जीतने के बाद उन नीतियों को लागू करने का प्रयास करते हैं।

इस प्रकार दल किसी समाज के बुनियादी राजनीतिक विभाजन को भी दर्शाते हैं। पार्टी समाज के किसी एक हिस्से से संबंधित होती है इसलिए उसका नज़रिया समाज के उस वर्ग/समुदाय विशेष की तरफ़ झुका होता है। किसी दल की पहचान उसकी नीतियों और उसके सामाजिक आधार से तय होती है। राजनीतिक दल के तीन प्रमुख हिस्से हैं :

- नेता
- सक्रिय सदस्य; और
- अनुयायी या समर्थक

राजनीतिक दल के कार्य

राजनीतिक दल क्या करते हैं? मूलत: राजनीतिक दल राजनीतिक पदों को भरते हैं और राजनीतिक सत्ता का इस्तेमाल करते हैं। दल इस काम को कई तरह से करते हैं –

1 दल चुनाव लड़ते हैं। अधिकांश लोकतांत्रिक देशों में चुनाव राजनीतिक दलों द्वारा खड़ा किए गए उम्मीदवारों के बीच लड़ा जाता है। राजनीतिक दल उम्मीदवारों का चुनाव कई तरीकों से करते हैं। अमरीका जैसे कुछ देशों में उम्मीदवार का चुनाव दल के सदस्य और समर्थक करते हैं। अब इस तरह से उम्मीदवार चुनने वाले देशों की संख्या बढ़ती जा रही है। अन्य देशों, जैसे भारत में, दलों के नेता ही उम्मीदवार चुनते हैं।

2 दल अलग-अलग नीतियों और कार्यक्रमों को मतदाताओं के सामने रखते हैं और मतदाता अपनी पसंद की नीतियाँ और कार्यक्रम चुनते हैं। देश के लिए कौन-सी नीतियाँ ठीक हैं – इस बारे में हममें से सभी की राय अलग-अलग हो सकती है। पर कोई भी सरकार इतने अलग-अलग विचारों को एक साथ लेकर नहीं चल सकती। लोकतंत्र में समान या मिलते-जुलते विचारों को एक साथ लाना होता है ताकि सरकार की नीतियों को एक दिशा दी जा सके। पार्टियाँ यही काम करती हैं। पार्टियाँ तरह-तरह के विचारों

को कुछ बुनियादी राय तक समेट लाती हैं जिनका वे समर्थन करती हैं। सरकार प्रायः शासक दल की राय के अनुरूप अपनी नीतियाँ तय करती है।

3 पार्टियाँ देश के कानून निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाती हैं। कानूनों पर औपचारिक बहस होती है और उन्हें विधायिका में पास करवाना पड़ता है लेकिन विधायिका के अधिकतर सदस्य किसी न किसी दल के सदस्य होते हैं। इस कारण वे अपने दल के नेता के निर्देश पर फ़ैसला करते हैं।

4 दल ही सरकार बनाते और चलाते हैं। हमने पिछले साल पढ़ा था कि नीतियों और बड़े फ़ैसलों के मामले में निर्णय राजनेता ही लेते हैं और ये नेता विभिन्न दलों के होते हैं। पार्टियाँ नेता चुनती हैं, उनको प्रशिक्षित करती हैं और फिर पार्टी के सिद्धांतों और कार्यक्रम के अनुसार फ़ैसले करने के लिए उन्हें मंत्री बनाती हैं ताकि वे पार्टी की इच्छा के अनुसार सरकार चला सकें।

5 चुनाव हारने वाले दल शासक दल के विरोधी पक्ष की भूमिका निभाते हैं। सरकार की गलत नीतियों और असफलताओं की आलोचना करने के साथ वह अपनी अलग राय भी रखते हैं। विपक्षी दल सरकार के खिलाफ़ आम जनता को भी गोलबंद करते हैं।

6 जनमत-निर्माण में दल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे मुद्दों को उठाते और उन पर बहस करते हैं। विभिन्न दलों के लाखों कार्यकर्ता देश-भर में बिखरे होते हैं। समाज के विभिन्न वर्गों में उनके मित्र संगठन या दबाव समूह भी काम करते रहते हैं। दल कई दफ़े लोगों की समस्याओं को लेकर आंदोलन भी करते हैं। अक्सर विभिन्न दलों द्वारा रखी जाने वाली राय के इर्द-गिर्द ही समाज के लोगों की राय बनती जाती है।

7 दल ही सरकारी मशीनरी और सरकार द्वारा चलाए जाने वाले कल्याण कार्यक्रमों तक लोगों की पहुँच बनाते हैं। एक साधारण नागरिक के लिए किसी सरकारी अधिकारी की तुलना में किसी राजनीतिक कार्यकर्ता से जान-पहचान बनाना, उससे संपर्क साधना आसान होता है। इसी कारण लोग दलों पर पूरा विश्वास न करते हुए भी उन्हें अपने करीब मानते हैं। दलों को भी हर हाल में लोगों की माँगों और ज़रूरतों पर ध्यान देना होता है वरना अगले चुनाव में लोग उन्हें धूल चटा सकते हैं।

ठीक है, मान लिया कि हम राजनीतिक दलों के बगैर नहीं रह सकते। पर ज़रा यह बताइए कि किस आधार पर जनता किसी राजनीतिक दल का समर्थन करती है?

बात बोले भेद खोले

शासक दल : जिस दल का शासन हो यानी जिसकी सरकार बनी हो।

राजनीतिक दल की ज़रूरत

दलों के काम की इस सूची से उस सवाल का जवाब मिलता है जो इस खंड की शुरुआत में पूछा गया था। दरअसल हमें राजनीतिक दलों की ज़रूरत इन्हीं कामों के लिए है। पर हमें अभी भी इस सवाल को पूछने की ज़रूरत है कि आधुनिक लोकतंत्र राजनीतिक दलों के बिना क्यों नहीं चल सकता? दलों के बिना क्या स्थिति होगी – इसकी कल्पना करके ही हम उनकी ज़रूरत को समझ सकते हैं। अगर दल न हों तो सारे उम्मीदवार स्वतंत्र या निर्दलीय होंगे। तब, इनमें से कोई भी बड़े नीतिगत बदलाव के बारे में लोगों से चुनावी वायदे करने की स्थिति में नहीं होगा। सरकार बन जाएगी पर उसकी उपयोगिता संदिग्ध होगी। निर्वाचित प्रतिनिधि सिर्फ़ अपने निर्वाचन क्षेत्रों में किए गए कामों के लिए जवाबदेह होंगे। लेकिन, देश कैसे चले इसके लिए कोई उत्तरदायी नहीं होगा।

हम गैर-दलीय आधार पर होने वाले पंचायत चुनावों का उदाहरण सामने रखकर भी इस बात की परख कर सकते हैं। हालाँकि इन चुनावों में दल औपचारिक रूप से अपने उम्मीदवार नहीं खड़े करते लेकिन हम पाते हैं कि चुनाव के अवसर पर पूरा गाँव कई खेमों में बँट जाता है और हर खेमा सभी पदों के लिए अपने उम्मीदवारों का 'पैनल' उतारता है। राजनीतिक दल भी ठीक यही काम करते हैं। यही कारण है कि हमें दुनिया के लगभग सभी देशों में राजनीतिक दल नज़र आते हैं – चाहे वह देश बड़ा हो या छोटा, नया हो या पुराना, विकसित हो या विकासशील।

© NCERT not to be republished

राजनीतिक दलों का उदय प्रतिनिधित्व पर आधारित लोकतांत्रिक व्यवस्था के उभार के साथ जुड़ा है। हम पढ़ चुके हैं कि बड़े समाजों के लिए प्रतिनिधित्व आधारित लोकतंत्र की ज़रूरत होती है। जब समाज बड़े और जटिल हो जाते हैं तब उन्हें विभिन्न मुद्दों पर अलग-अलग विचारों को समेटने और सरकार की नज़र में लाने के लिए किसी माध्यम या एजेंसी की ज़रूरत होती है। विभिन्न जगहों से आए प्रतिनिधियों को साथ करने की ज़रूरत होती है ताकि एक ज़िम्मेवार सरकार का गठन हो सके। उन्हें सरकार का समर्थन करने या उस पर अंकुश रखने, नीतियाँ बनवाने और नीतियों का समर्थन अथवा विरोध करने के लिए उपकरणों की ज़रूरत होती है। प्रत्येक प्रतिनिधि-सरकार की ऐसी जो भी ज़रूरतें होती हैं, राजनीतिक दल उनको पूरा करते हैं। इस तरह हम कह सकते हैं कि राजनीतिक दल लोकतंत्र की एक अनिवार्य शर्त हैं।

राजनीतिक दलों की गतिविधियाँ दर्शाने वाली इन तस्वीरों का वर्गीकरण करें। ऊपर बताई गई गतिविधयों से संबंधित अपने इलाके की कोई तस्वीर या खबर की कतरन ढूँढ़िए।

(1) पी.वी. सुब्रह्मण्यम (2) के. गोपीनाथन (3) आर.आर. कोनवार (4) ए. चक्रवर्ती, द हिंदू से साभार

1. भाजपा महिला मोर्चा की कार्यकर्ता प्याज और रसोई गैस की कीमतें बढ़ने के विरोध में प्रदर्शन करती हुईं।
2. ज़हरीली शराब पीने से मरे व्यक्तियों के परिवारों को एक लाख रुपए का चेक देते मंत्री।
3. कोरिया की कंपनी पोस्को को ओडिसा से लौह अयस्क निर्यात करने की अनुमति देने पर राज्य सरकार के खिलाफ़ माकपा, भाकपा, ओ जी पी और जद (एस) के कार्यकर्ता जुलूस निकालते हुए।

कितने राजनीतिक दल?

लोकतंत्र में नागरिकों का कोई भी समूह राजनीतिक दल बना सकता है। इस औपचारिक अर्थ में सभी देशों में बहुत से राजनीतिक दल हैं। भारत में ही चुनाव आयोग में नाम पंजीकृत कराने वाले दलों की संख्या 750 से ज़्यादा है। लेकिन, हर दल चुनाव में गंभीर चुनौती देने की स्थिति में नहीं होता। चुनाव जीतने और सरकार बनाने की होड़ में आमतौर पर कुछेक पार्टियाँ ही सक्रिय होती हैं। ऐसे में सवाल यह उठता है कि लोकतंत्र की बेहतरी के लिए कितने दलों का होना अच्छा है?

कई देशों में सिर्फ़ एक ही दल को सरकार बनाने और चलाने की अनुमति है।

not to be republished

राजनीति की नैतिक ताकत?

निम्नलिखित काल्पनिक कथा के पीछे प्रेरणा है–श्री किशन पटनायक (1930-2004), जिन्हें किशनजी के नाम से भी जाना जाता है। 1962 में इन्हें ओड़िसा के संबलपुर से सांसद चुना गया था।

एक वैकल्पिक राजनीतिक ढाँचा खड़ा करने की बात से किशनजी का क्या मतलब था? सुधा, करुणा, शाहीन और ग्रेसी की बातचीत के क्रम में यह सवाल उठा। ये चारों महिलाएँ देश के अलग-अलग हिस्सों में चल रहे मज़बूत जनांदोलनों से जुड़ी थीं। ये चारों ओड़िसा के एक गाँव में बैठी थीं और जनांदोलनों के भविष्य पर नए सिरे से विचार कर रही थीं और यहाँ उनको आंदोलनों के रोज़-रोज़ के कामों की चिक-चिक भी परेशान नहीं कर रही थी।

स्वाभाविक तौर पर बातें किशनजी की तरफ़ मुड़ीं जिन्हें देश-भर की आंदोलनकारी जमातें अपना मित्र, राजनीतिक दार्शनिक और नैतिक मार्गदर्शक मानती थीं। किशनजी का तर्क था कि जनांदोलन के लोग चुनावी राजनीति में सीधी हिस्सेदारी करें। यह एक सरल लेकिन ताकतवर तर्क था। एक मुद्दे पर केंद्रित आंदोलन से जीवन के एक क्षेत्र में तो कुछ बदलाव लाया जा सकता है लेकिन अगर हम बुनियादी सामाजिक बदलाव या जीवन के किसी एक पहलू में भी बुनियादी बदलाव चाहते हैं तब हमें एक राजनीतिक संगठन की ज़रूरत होगी। जनांदोलनों को राजनीति में एक नैतिक ताकत के तौर पर एक नया राजनीतिक संगठन बनाना चाहिए। उन्होंने कहा कि यह तक तात्कालिक ज़रूरत है क्योंकि सारे राजनीतिक दल सामाजिक बदलाव के लिए अप्रासंगिक हो चुके हैं।

ग्रेसी ने कहा, "लेकिन किशनजी ने कभी स्पष्ट नहीं किया कि यह संगठन कैसा होगा। उन्होंने सिर्फ़ राजनीतिक विकल्प या राजनीति में तीसरी शक्ति की बात की। पर क्या उनके ऐसा कहने का आशय एक राजनीतिक दल बनाने से था" ग्रेसी का मानना था कि पुराने ढर्रे का राजनीतिक दल सामाजिक बदलाव लाने में समर्थ नहीं है।"

सुधा उसकी बात से सहमत थी – "मैंने इस विषय पर कई बार विचार किया है। मैं मानती हूँ कि हमने आज तक विस्थापन, भूमंडलीकरण, जातिगत और लैंगिक उत्पीड़न या विकास के वैकल्पिक माडल के लिए जितने आंदोलन खड़े किए हैं, वे राजनीतिक ही हैं, पर जैसे ही हम कोई दल बनाएँगे, हमारी इतने वर्षों की प्रतिष्ठा चौपट हो जाएगी। तब लोग हमें नेताओं से अलग नहीं मानेंगे।"

करुणा ने बीच में ही कहा, "फिर हमने यह भी देखा है कि मौजूदा दलों पर दबाव बनाकर भी काफ़ी कुछ हासिल किया जा सकता है। हमने पंचायत चुनावों में अपने उम्मीदवार उतारे थे लेकिन नतीजे उत्साहजनक नहीं रहे। लोग हमारे काम का आदर करते हैं, वे हमें अच्छा भी मानते हैं लेकिन जब वोट देने की बात आती है तो वे स्थापित दलों को ही वोट देते हैं।"

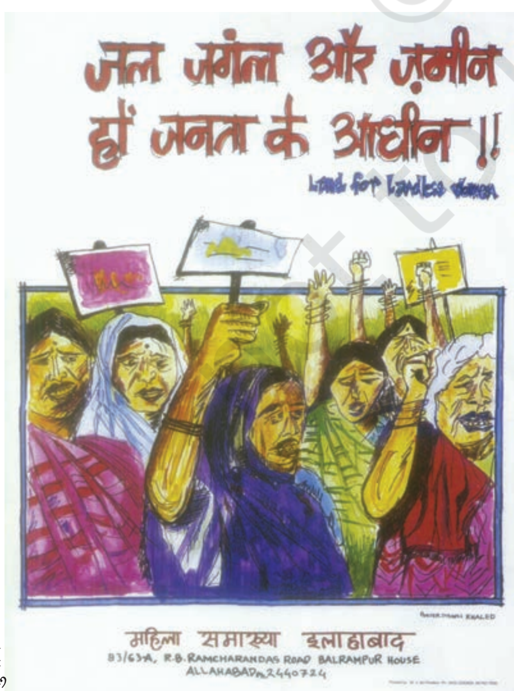

ज़ुबान

शाहीन उनसे सहमत नहीं थी : "देखिए, बात बहुत साफ़ है। किशनजी चाहते थे कि सभी जनांदोलन मिलकर एक नयी राजनीतिक पार्टी बनाएँ, हाँ, वे इस पार्टी को दूसरों से एकदम अलग रंग रूप में देखना चाहते थे। वे राजनीतिक विकल्प बनाने की जगह वैकल्पिक किस्म की राजनीति चाहते थे।"

किशनजी अब इस दुनिया में नहीं हैं। इन चारों कार्यकर्ताओं के बारे में आपकी क्या राय है? क्या उन्हें नया राजनीतिक दल बनाना चाहिए? क्या कोई राजनीतिक दल राजनीति में नैतिक बल बन सकता है? यह दल कैसा होना चाहिए?

© NCERT not to be republished

इस कारण उन्हें एकदलीय शासन-व्यवस्था कहा जाता है। कक्षा 9 में हमने देखा था कि चीन में सिर्फ़ कम्युनिस्ट पार्टी को शासन करने की अनुमति है। हालाँकि कानूनी रूप से वहाँ भी लोगों को राजनीतिक दल बनाने की आज़ादी है पर वहाँ की चुनाव प्रणाली सत्ता के लिए स्वतंत्र प्रतिद्वंद्विता की अनुमति नहीं देती इसलिए लोगों को नया राजनीतिक दल बनाने का कोई लाभ नहीं दिखता और इसलिए कोई नया दल नहीं बन पाता। हम एकदलीय व्यवस्था को अच्छा विकल्प नहीं मान सकते क्योंकि यह लोकतांत्रिक विकल्प नहीं है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में कम से कम दो दलों को राजनीतिक सत्ता के लिए चुनाव में प्रतिद्वंद्विता करने की अनुमति तो होनी ही चाहिए। साथ ही उन्हें सत्ता में आ सकने का पर्याप्त अवसर भी रहना चाहिए।

कुछ देशों में सत्ता आमतौर पर दो मुख्य दलों के बीच ही बदलती रहती है। वहाँ अनेक दूसरी पार्टियाँ हो सकती हैं, वे भी चुनाव लड़कर कुछ सीटें जीत सकती हैं पर सिर्फ़ दो ही दल बहुमत पाने और सरकार बनाने के प्रबल दावेदार होते हैं। अमरीका और ब्रिटेन में ऐसी ही दो दलीय व्यवस्था है।

जब अनेक दल सत्ता के लिए होड़ में हों और दो दलों से ज़्यादा के लिए अपने दम पर या दूसरों से गठबंधन करके सत्ता में आने का ठीक-ठाक अवसर हो तो इसे बहुदलीय व्यवस्था कहते हैं। भारत में भी ऐसी ही बहुदलीय व्यवस्था है। इस व्यवस्था में कई दल गठबंधन बनाकर भी सरकार बना सकते हैं। जब किसी बहुदलीय व्यवस्था में अनेक पार्टियाँ चुनाव लड़ने और सत्ता में आने के लिए आपस में हाथ मिला लेती हैं तो इसे गठबंधन या मोर्चा कहा जाता है। जैसे, 2004 के संसदीय चुनाव में भारत में ऐसे तीन प्रमुख गठबंधन थे : राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन, संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन और वाम मोर्चा। अक्सर बहुदलीय व्यवस्था बहुत घालमेल वाली लगती है और देश को राजनीतिक अस्थिरता की तरफ़ ले जाती है पर इसके साथ ही इस प्रणाली में विभिन्न हितों और विचारों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व मिल जाता है।

तो, इनमें से कौन सी प्रणाली बेहतर है? अक्सर पूछे जाने वाले इस सवाल का संभवत: सबसे अच्छा जवाब यही होगा कि यह कोई बहुत अच्छा सवाल नहीं है। दलीय व्यवस्था का चुनाव करना किसी मुल्क के हाथ में नहीं है। यह एक लंबे दौर के कामकाज के बाद खुद विकसित होती है और इसमें समाज की प्रकृति, इसके राजनीतिक विभाजन, राजनीति का इतिहास और इसकी चुनाव प्रणाली – सभी चीज़ें अपनी भूमिका निभाती हैं। इसे बहुत जल्दी बदला नहीं जा सकता। हर देश अपनी विशेष परिस्थितियों के अनुरूप दलीय व्यवस्था विकसित करता है। जैसे, अगर भारत में बहुदलीय व्यवस्था है तो उसका कारण यह है कि दो-तीन पार्टियाँ इतने बड़े मुल्क की सारी सामाजिक और भौगोलिक विविधताओं को समेट पाने में अक्षम हैं। हर मुल्क और हर स्थिति में कोई एक ही आदर्श प्रणाली चले यह संभव नहीं है।

ये नेता गठबंधन जैसी चीज़ को कैसे बना-संभाल लेते हैं? मुझे तो सारी पार्टियों के नाम तक याद नहीं रहते!

आइए, दलीय व्यवस्था के बारे में हमने जो जाना उसे भारत के विभिन्न राज्यों पर लागू करें। यहाँ राज्य स्तर पर मौजूद तीन तरह की दलीय व्यवस्थाएँ दी गई हैं। क्या आप इन श्रेणियों के लिए कम से कम दो-दो राज्यों के नाम बता सकते हैं।

- दो दलीय व्यवस्था
- दो गठबंधनों वाली बहुदलीय व्यवस्था
- बहुदलीय व्यवस्था

© NCERT not to be republished

राजनीतिक दलों में जन-भागीदारी

अक्सर कहा जाता है कि राजनीतिक दल संकट से गुज़र रहे हैं क्योंकि जनता उन्हें सम्मान की नज़र से नहीं देखती। उपलब्ध प्रमाण बताते हैं कि यह बात आंशिक रूप से ही सही है। बड़े नमूनों पर आधारित और कई दशकों तक चले सर्वेक्षण के तथ्य बताते हैं कि :

दक्षिण एशिया की जनता राजनीतिक दलों पर बहुत भरोसा नहीं करती। जो लोग दलों पर 'एकदम भरोसा नहीं' 'बहुत भरोसा नहीं' के पक्ष में बोले उनका अनुपात 'कुछ भरोसा' या 'पूरा भरोसा' बताने वालों से काफ़ी ज़्यादा था।

यही बात ज़्यादातर लोकतंत्रों पर लागू होती है। पूरी दुनिया में राजनीतिक दल ही एक ऐसी संस्था है जिस पर लोग सबसे कम भरोसा करते हैं।

बहरहाल, राजनीतिक दलों के कामकाज में लोगों की भागीदारी का स्तर काफ़ी ऊँचा है। खुद को किसी राजनीतिक दल का सदस्य बताने वाले भारतीयों का अनुपात कनाडा, जापान, स्पेन और दक्षिण कोरिया जैसे विकसित देशों से भी ज़्यादा है।

पिछले तीन दशकों के दौरान भारत में राजनीतिक दलों की सदस्यता का अनुपात धीरे-धीरे बढ़ता गया है।

खुद को किसी राजनीतिक दल का करीबी बताने वालों का अनुपात भी इस अवधि में बढ़ता गया है।

थोड़े से उतार-चढ़ाव के बावजूद भारत में लोगों के दलगत जुड़ाव में बढ़ोतरी हुई है।
अपने को किसी पार्टी से जोड़कर देखने वाले लोगों की संख्या

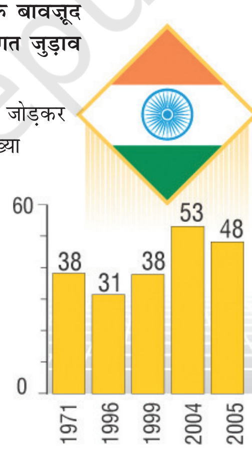

विभिन्न दलों की सदस्य-संख्या दक्षिण एशिया में शेष विश्व की अपेक्षा कहीं ज़्यादा है।
खुद को किसी दल का सदस्य बताने वाले लोगों की संख्या

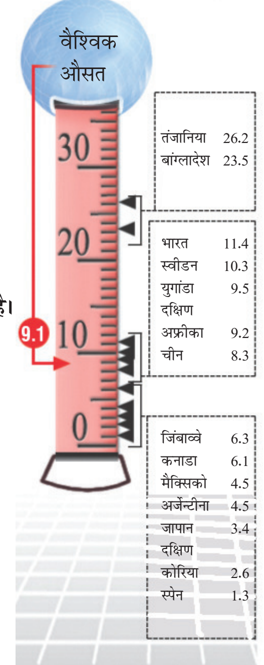

भारत में पार्टी-सदस्यता बढ़ी है।
खुद को किसी दल का सदस्य बताने वाले लोगों की संख्या का ग्राफ़

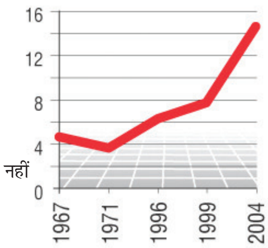

दक्षिण एशिया

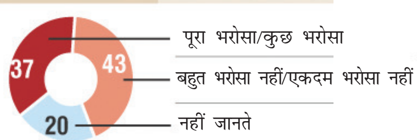

स्रोत : एसडीएसए टीम, स्टेट ऑव डेमोक्रेसी इन साऊथ एशिया, दिल्ली : आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2007

© NCERT not to be republished

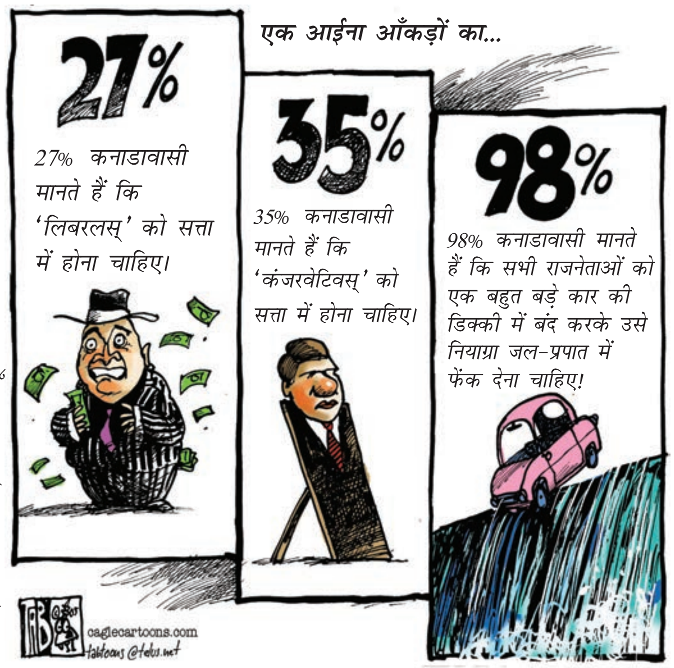

टैब–द कैलगरी सन, केगल कार्टून्स

क्या ये कार्टून पिछले पन्ने पर दिए गए आँकड़ों के ग्राफ से मेल खाते हैं?

राष्ट्रीय दल

विश्व के संघीय व्यवस्था वाले लोकतंत्रों में दो तरह के राजनीतिक दल हैं : संघीय इकाइयों में से सिर्फ़ एक इकाई में अस्तित्व रखने वाले दल और अनेक या संघ की सभी इकाइयों में अस्तित्व रखने वाले दल। भारत में भी यही स्थिति है। कई पार्टियाँ पूरे देश में फैली हुई हैं और उन्हें राष्ट्रीय पार्टी कहा जाता है। इन दलों की विभिन्न राज्यों में इकाइयाँ हैं। पर कुल मिलाकर देखें तो ये सारी इकाइयाँ राष्ट्रीय स्तर पर तय होने वाली नीतियों, कार्यक्रमों और रणनीतियों को ही मानती हैं।

देश की हर पार्टी को निर्वाचन आयोग में अपना पंजीकरण कराना पड़ता है। आयोग सभी दलों को समान मानता है पर यह बड़े और स्थापित दलों को कुछ विशेष सुविधाएँ देता है। इन्हें अलग चुनाव चिह्न दिया जाता है जिसका प्रयोग पार्टी का अधिकृत उम्मीदवार ही कर सकता है। इस विशेषाधिकार और कुछ अन्य लाभ पाने वाली पार्टियों को 'मान्यता प्राप्त' दल कहते हैं। चुनाव आयोग ने स्पष्ट नियम बनाए हैं कि कोई दल कितने प्रतिशत वोट और सीट जीतकर 'मान्यता प्राप्त' दल बन सकता है। जब कोई पार्टी राज्य विधानसभा के चुनाव में पड़े कुल मतों का 6 फ़ीसदी या उससे अधिक हासिल करती है और कम से कम दो सीटों पर जीत दर्ज करती है तो उसे अपने राज्य के राजनीतिक दल के रूप में मान्यता मिल जाती है। अगर कोई दल लोकसभा-चुनाव में पड़े कुल वोट का अथवा चार राज्यों के विधान सभाई चुनाव में पड़े कुल वोटों का 6 प्रतिशत हासिल करता है और लोकसभा के चुनाव में कम से कम चार सीटों पर जीत दर्ज़ करता है तो उसे राष्ट्रीय दल की मान्यता मिलती है।

इस वर्गीकरण के हिसाब से 2017 में देश में सात दल राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त थे। आइए, इनमें से प्रत्येक के बारे में कुछ महत्वपूर्ण तथ्य जान लें।

भारत निर्वाचन आयोग द्वारा राजनीतिक दलों को पंजीकरण और मान्यता कैसे प्रदान की जाती है, इसके बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें http://eci.nic.in

ऑल इंडिया तृणमूल कांग्रेस : यह 1 जनवरी 1998 को ममता बनर्जी के नेतृत्व में बनी। इसे 2016 में राष्ट्रीय दल के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। 'पुष्प और तृण' पार्टी का प्रतीक है। धर्मनिरपेक्षता

© NCERT not to be republished

और संघवाद के प्रति प्रतिबद्ध। 2011 से पश्चिम बंगाल में सत्ता में है। अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर और त्रिपुरा में भी इसकी उपस्थिति है। 2014 में हुए आम चुनाव में इसे 3.84% वोट मिले और 34 सीटों पर जीत हासिल हुई, जिससे लोकसभा में यह चौथी सबसे बड़ी पार्टी बन गई।

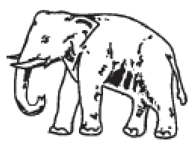

बहुजन समाज पार्टी : स्व. कांशीराम के नेतृत्व में 1984 में गठन। बहुजन समाज जिसमें दलित, आदिवासी, पिछड़ी जातियाँ और धार्मिक अल्पसंख्यक शामिल हैं, के लिए राजनीतिक सत्ता पाने का प्रयास और उनका प्रतिनिधित्व करने का दावा। पार्टी साहू महाराज, महात्मा फुले, पेरियार रामास्वामी नायकर और बाबा साहब आंबेडकर के विचारों और शिक्षाओं से प्रेरणा लेती है। दलितों और कमज़ोर वर्ग के लोगों के कल्याण और उनके हितों की रक्षा के मुद्दों पर सबसे ज़्यादा सक्रिय इस पार्टी का मुख्य आधार उत्तर प्रदेश में है, पर मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड, दिल्ली और पंजाब में भी यह पार्टी पर्याप्त ताकतवर है। अलग-अलग पार्टियों से अलग-अलग अवसरों पर समर्थन लेकर इसने उत्तर प्रदेश में चार बार सरकार बनाई। इस दल को 2014 के लोकसभा चुनाव में करीब 4 फ़ीसदी वोट मिले, लेकिन एक भी सीट नहीं मिली।

भारतीय जनता पार्टी : पुराने भारतीय जन संघ को, जिसे श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने 1951 में गठित किया, पुनर्जीवित करके 1980 में यह पार्टी बनी। भारत की प्राचीन संस्कृति और मूल्य; दीनदयाल उपाध्याय के विचार—समग्र मानवतावाद एवं अंत्योदय से प्रेरणा लेकर मज़बूत और आधुनिक भारत बनाने का लक्ष्य; भारतीय राष्ट्रवाद और राजनीति की इसकी अवधारणा में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद (या हिंदुत्व) एक प्रमुख तत्व है। पार्टी जम्मू और कश्मीर को क्षेत्रीय और राजनीतिक स्तर पर विशेष दर्जा देने के खिलाफ़ है। यह देश में रहने वाले सभी धर्म के लोगों के लिए समान नागरिक संहिता बनाने और धर्मांतरण पर रोक लगाने के पक्ष में है। 1990 के दशक में इसके समर्थन का आधार काफ़ी व्यापक हुआ। पहले देश के उत्तरी और पश्चिमी तथा शहरी इलाकों तक ही सिमटी रहने वाली इस पार्टी ने इस दशक में दक्षिण, पूर्व, पूर्वोत्तर तथा देश के ग्रामीण इलाकों में अपना आधार बढ़ाया। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के नेता की हैसियत से यह पार्टी 1998 में सत्ता में आई। गठबंधन में कई क्षेत्रीय दल शामिल थे। 2014 में हुए लोकसभा चुनाव में 282 सीटें जीतकर सबसे बड़े दल के रूप में उभरी। अभी केंद्र में शासन करने वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन का नेतृत्व यही दल कर रहा है।

कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (सी पी आई): 1925 में गठित। मार्क्सवाद-लेनिनवाद, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र में आस्था। अलगाववादी और सांप्रदायिक ताकतों की विरोधी। यह पार्टी संसदीय लोकतंत्र को मज़दूर वर्ग, किसानों और गरीबों के हितों को आगे बढ़ाने का एक उपकरण मानती है। 1964 की फूट (जिसमें माकपा इससे अलग हुई) के बाद इसका जनाधार सिकुड़ता चला गया लेकिन केरल, पश्चिम बंगाल, पंजाब, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में अभी भी ठीकठाक स्थिति। बहरहाल, इसका समर्थन धीरे-धीरे कम होता गया है। 2014 के लोकसभा चुनाव में इसे 1 फ़ीसदी से कम वोट और 1 सीट हासिल हुई। मज़बूत वाम मोर्चा बनाने के लिए सभी वामपंथी दलों को साथ लाने की पक्षधर।

कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया-मार्क्सिस्ट (सीपीआई-एम) : 1964 में स्थापित; मार्क्सवाद-लेनिनवाद में आस्था। समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र की समर्थक तथा साम्राज्यवाद और सांप्रदायिकता की विरोधी।

© NCERT not to be republished

यह पार्टी भारत में सामाजिक-आर्थिक न्याय का लक्ष्य साधने में लोकतांत्रिक चुनावों को सहायक और उपयोगी मानती है। पश्चिम बंगाल, केरल और त्रिपुरा में बहुत मज़बूत आधार। गरीबों, कारखाना मज़दूरों, खेतिहर मज़दूरों और बुद्धिजीवियों के बीच अच्छी पकड़। यह पार्टी देश में पूँजी और सामानों की मुक्त आवाजाही की अनुमति देने वाली नयी आर्थिक नीतियों की आलोचक है। पश्चिम बंगाल में लगातार 34 वर्षों से शासन में रही। 2014 के चुनाव में इसने करीब 3 फ़ीसदी वोट और लोकसभा की 9 सीटें हासिल की।

इंडियन नेशनल काँग्रेस : इसे आमतौर पर काँग्रेस पार्टी कहा जाता है और यह दुनिया के सबसे पुराने दलों में से एक है। 1885 में गठित इस दल में कई बार विभाजन हुए हैं। आज़ादी के बाद राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर अनेक दशकों तक इसने प्रमुख भूमिका निभाई है। जवाहरलाल नेहरू की अगुवाई में इस दल ने भारत को एक आधुनिक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने का प्रयास किया। 1971 तक लगातार और फिर 1980 से 1989 तक इसने देश पर शासन किया। 1989 के बाद से इस दल के जन-समर्थन में कमी आई पर अभी यह पूरे देश और समाज के सभी वर्गों में अपना आधार बनाए हुए है। अपने वैचारिक रुझान में मध्यमार्गी (न वामपंथी न दक्षिणपंथी) इस दल ने धर्मनिरपेक्षता और कमज़ोर वर्गों तथा अल्पसंख्यक समुदायों के हितों को अपना मुख्य अजेंडा बनाया है। यह दल नयी आर्थिक नीतियों का समर्थक है पर इस बात को लेकर भी सचेत है कि इन नीतियों का गरीब और कमज़ोर वर्गों पर बुरा असर न पड़े। 2004 से 2014 तक संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का नेतृत्व। 2014 के लोकसभा चुनाव में यह पार्टी पराजित हुई और अभी लोकसभा में मुख्य विपक्षी दल है।

नेशनलिस्ट काँग्रेस पार्टी : काँग्रेस पार्टी में विभाजन के बाद 1999 में यह पार्टी बनी। लोकतंत्र, गांधीवादी धर्मनिरपेक्षता, समता, सामाजिक न्याय और संघवाद में आस्था। यह पार्टी सरकार के प्रमुख पदों को सिर्फ़ भारत में जन्मे नागरिकों के लिए आरक्षित करना चाहती है। महाराष्ट्र में प्रमुख ताकत होने के साथ ही यह मेघालय, मणिपुर और असम में भी ताकतवर है। काँग्रेस के साथ महाराष्ट्र सरकार में भागीदार। 2004 से संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन में साझीदार।

क्षेत्रीय दल

इन सात पार्टियों के अलावा अन्य सभी प्रमुख दलों को निर्वाचन आयोग ने 'राज्यीय दल' के रूप में मान्यता दी है। आमतौर पर इन्हें क्षेत्रीय दल कहा जाता है पर यह ज़रूरी नहीं है कि अपनी विचारधारा या नज़रिए में ये पार्टियाँ क्षेत्रीय ही हों। इनमें से कुछ अखिल भारतीय दल हैं पर उन्हें कुछ क्षेत्रों में ही सफलता मिल पाई है। समाजवादी पार्टी और राष्ट्रीय जनता दल का राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक संगठन है और इनकी कई राज्यों में इकाइयाँ हैं। बीजू जनता दल, सिक्किम लोकतांत्रिक मोर्चा, मिज़ो नेशनल फ्रंट और तेलंगाणा राष्ट्र समिति जैसी पार्टियाँ अपनी क्षेत्रीय पहचान को लेकर सचेत हैं।

पिछले तीन दशकों में क्षेत्रीय दलों की संख्या और ताकत में वृद्धि हुई है। इससे भारतीय संसद विविधताओं से और भी ज़्यादा संपन्न हुई है। 2014 तक, किसी एक राष्ट्रीय दल का लोकसभा में बहुमत नहीं रहा। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय दल क्षेत्रीय दलों के साथ गठबंधन करने को मजबूर हुए हैं। 1996 के बाद से लगभग प्रत्येक क्षेत्रीय दल को एक या दूसरी राष्ट्रीय स्तर की गठबंधन सरकार का हिस्सा बनने का अवसर मिला है। इससे हमारे देश में संघवाद और लोकतंत्र मज़बूत हुए हैं (इन दलों के ब्यौरों के लिए अगले पृष्ठ का नक्शा देखें)।

© NCERT not to be republished

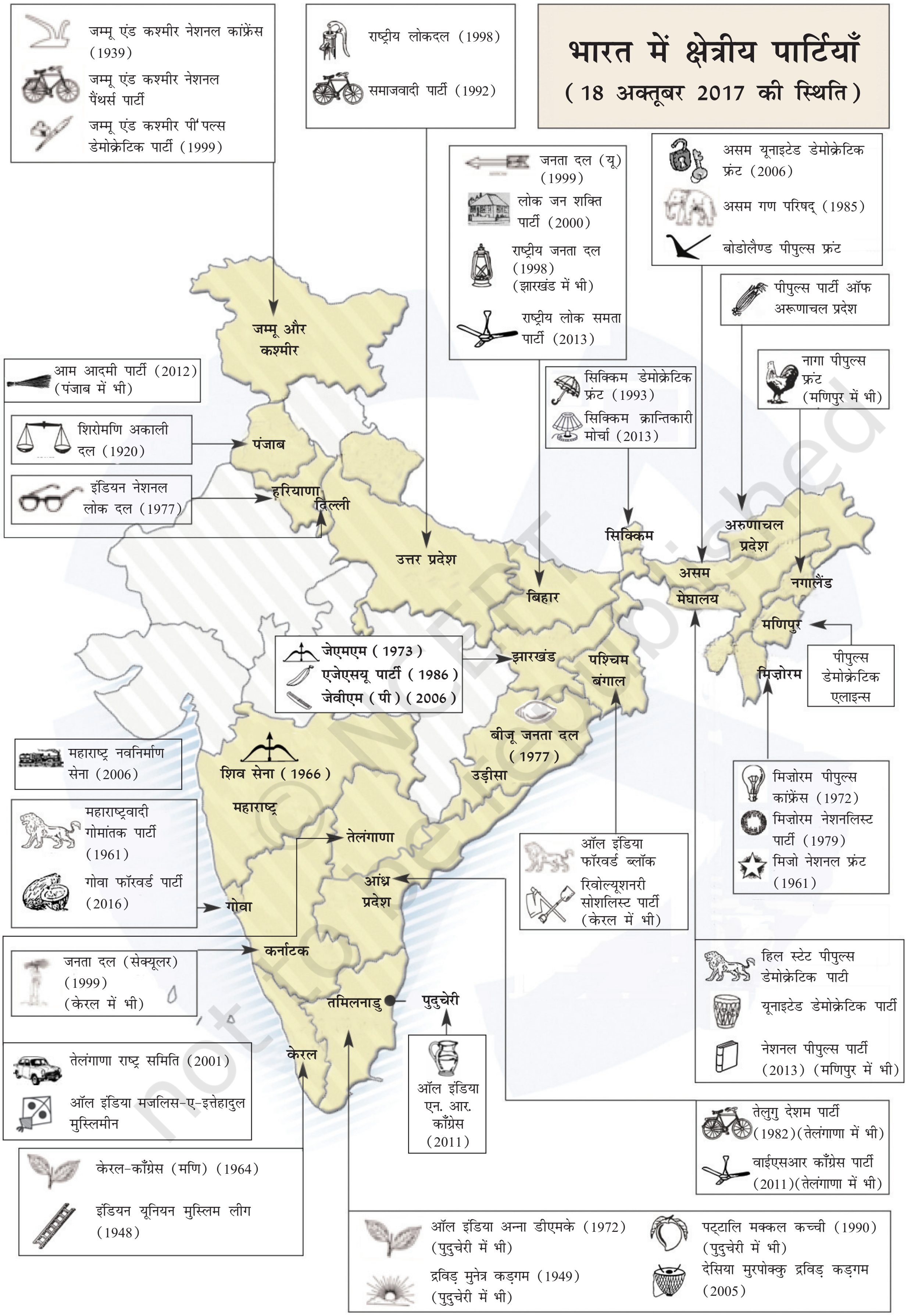

यह मानचित्र माप पर आधारित नहीं है।

राजनीतिक दलों के लिए चुनौतियाँ

हमने देखा है कि लोकतंत्र के कामकाज के लिए राजनीतिक पार्टियाँ कितनी महत्वपूर्ण हैं। चूँकि दल ही लोकतंत्र का सबसे ज़्यादा प्रकट रूप हैं, इसलिए यह स्वाभाविक है कि लोकतंत्र के कामकाज की गड़बड़ियों के लिए लोग राजनीतिक दलों को ही दोषी ठहराएँ। पूरी दुनिया में लोग इस बात से नाराज़ रहते हैं कि राजनीतिक दल अपना काम ठीक ढंग से नहीं करते। हमारे लोकतंत्र के साथ भी यही बात लागू होती है। आम जनता की नाराज़गी और आलोचना राजनीतिक दलों के कामकाज के चार पहलुओं पर ही केंद्रित रही है। लोकतंत्र का प्रभावी उपकरण बने रहने के लिए राजनीतिक दलों को इन चुनौतियों का सामना करना चाहिए और इन पर जीत हासिल करनी चाहिए।

पहली चुनौती है पार्टी के भीतर आंतरिक लोकतंत्र का न होना। सारी दुनिया में यह प्रवृत्ति बन गई है कि सारी ताकत एक या कुछेक नेताओं के हाथ में सिमट जाती है। पार्टियों के पास न सदस्यों की खुली सूची होती है, न नियमित रूप से सांगठनिक बैठकें होती हैं। इनके आंतरिक चुनाव भी नहीं होते। कार्यकर्ताओं से वे सूचनाओं का साझा भी नहीं करते। सामान्य कार्यकर्ता अनजान ही रहता है कि पार्टी के अंदर क्या चल रहा है। उसके पास न तो नेताओं से जुड़कर फ़ैसलों को प्रभावित करने की ताकत होती है न ही कोई और माध्यम। परिणामस्वरूप पार्टी के नाम पर सारे फ़ैसले लेने का अधिकार उस पार्टी के नेता हथिया लेते हैं। चूँकि कुछेक नेताओं के पास ही असली ताकत होती है इसलिए जो उनसे असहमत होते हैं उनका पार्टी में टिके रह पाना

बर्लुस्कोनी की कठपुतलियाँ

© रवि हैसन- स्वेंस्का डेग्लैडेट, केगल कार्टून्स

बर्लुस्कोनी इटली के प्रधानमंत्री थे। वह इटली के बड़े व्यवसायियों में एक हैं। वे 1993 में गठित फोर्जा इतालिया के नेता हैं। उनकी कंपनी कई टीवी चैनल, सबसे महत्वपूर्ण प्रकाशनगृह, एक फुटबाल क्लब (एसी मिलान) और बैंक की मालिक है। यह कार्टून पिछले चुनाव के समय का है।

दल महिलाओं को पर्याप्त टिकट क्यों नहीं देते? क्या इसका कारण आंतरिक लोकतंत्र की कमी है?

मुश्किल हो जाता है। पार्टी के सिद्धांतों और नीतियों से निष्ठा की जगह नेता से निष्ठा ही ज़्यादा महत्वपूर्ण बन जाती है।

दूसरी चुनौती पहली चुनौती से ही जुड़ी है—यह है वंशवाद की चुनौती। चूँकि अधिकांश दल अपना कामकाज पारदर्शी तरीके से नहीं करते इसलिए सामान्य कार्यकर्ता के नेता बनने और ऊपर आने की गुंजाइश काफ़ी कम होती है। जो लोग नेता होते हैं वे अनुचित लाभ लेते हुए अपने नज़दीकी लोगों और यहाँ तक कि अपने ही परिवार के लोगों को आगे बढ़ाते हैं। अनेक दलों में शीर्ष पद पर हमेशा एक ही परिवार के लोग आते हैं। यह दल के अन्य सदस्यों के साथ अन्याय है। यह बात लोकतंत्र के लिए भी अच्छी नहीं है क्योंकि इससे अनुभवहीन और बिना जनाधार वाले लोग ताकत वाले पदों पर पहुँच जाते हैं। यह प्रवृत्ति कुछ प्राचीन लोकतांत्रिक देशों सहित कमोबेश पूरी दुनिया में दिखाई देती है।

तीसरी चुनौती दलों में, (खासकर चुनाव के समय) पैसा और अपराधी तत्वों की बढ़ती घुसपैठ की है। चूँकि पार्टियों की सारी चिंता चुनाव जीतने की होती है अतः इसके लिए कोई भी जायज-नाजायज तरीका अपनाने से वे परहेज नहीं करतीं। वे ऐसे ही उम्मीदवार उतारती हैं जिनके पास काफ़ी पैसा हो या जो पैसे जुटा सकें। किसी पार्टी को ज़्यादा धन देने वाली कंपनियाँ और अमीर लोग उस पार्टी की नीतियों और फ़ैसलों को भी प्रभावित करते हैं। कई बार पार्टियाँ चुनाव जीत सकने वाले अपराधियों का समर्थन करती हैं या उनकी मदद लेती हैं। दुनिया भर में लोकतंत्र के समर्थक लोकतांत्रिक राजनीति में अमीर लोग और बड़ी कंपनियों की बढ़ती भूमिका को लेकर चिंतित हैं।

चौथी चुनौती पार्टियों के बीच विकल्पहीनता की स्थिति की है। सार्थक विकल्प का मतलब होता है कि विभिन्न पार्टियों की नीतियों और कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण अंतर हो। हाल के वर्षों में दलों के बीच वैचारिक अंतर कम होता गया है और यह प्रवृत्ति दुनिया-भर में दिखती है। जैसे, ब्रिटेन की लेबर पार्टी और कंजरवेटिव पार्टी के बीच अब बड़ा कम अंतर रह गया है। दोनों दल बुनियादी मसलों पर सहमत हैं और उनके बीच अंतर बस ब्यौरों का रह गया है कि नीतियाँ कैसे बनाई जाएँ और उन्हें कैसे लागू किया जाए। अपने देश में भी सभी बड़ी पार्टियों के बीच आर्थिक मसलों पर बड़ा कम अंतर रह गया है। जो लोग इससे अलग नीतियाँ चाहते हैं उनके लिए कोई विकल्प उपलब्ध नहीं है। कई बार लोगों के पास एकदम नया नेता चुनने का विकल्प भी नहीं होता क्योंकि वही थोड़े से नेता हर दल में आते-जाते रहते हैं।

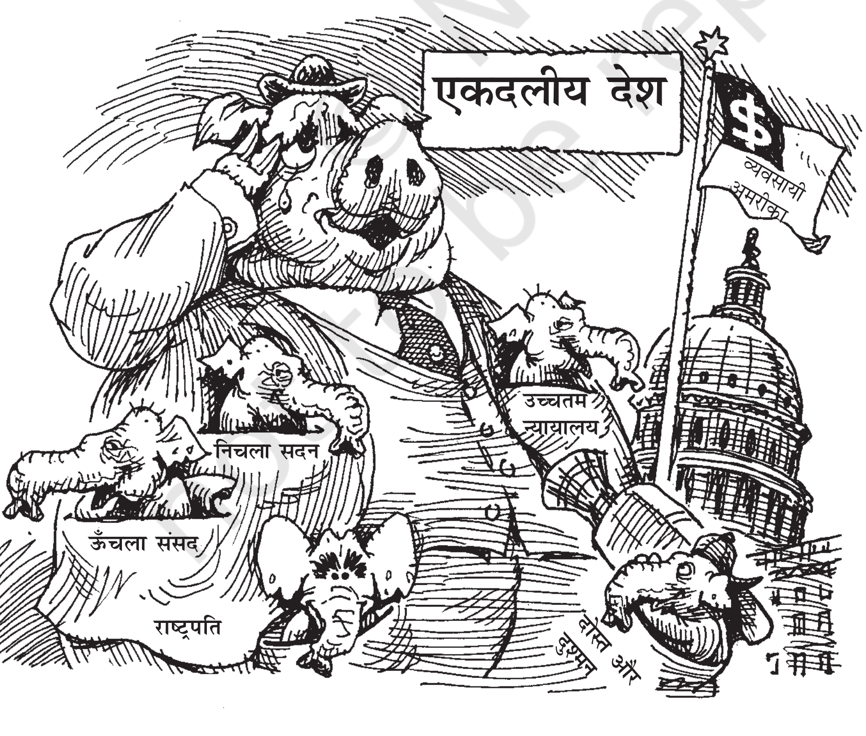

© इफाकर-केगल कार्टून्स, 16 जून 2004

यह कार्टून संयुक्त राज्य अमेरिका में रिपब्लिकन पार्टी के राष्ट्रपति जॉर्ज बुश के कार्य-काल में बना था। इस पार्टी का चुनाव-चिह्न हाथी है। कार्टून देश के सभी प्रमुख संस्थानों पर कारपोरेट अमेरिका का नियंत्रण होने का संकेत करता लगता है।

आप तो पहले से ही धनकुबेर हैं फिर चुनाव क्यों लड़ना चाहते हैं?

© मंजुल - डीएनए

क्या इसका मतलब यह है कि लोकतंत्र में लोग सिर्फ पैसे बनाने के लिए चुनाव लड़ते हैं? पर क्या यह सही नहीं कि बहुत से राजनेता जनता की भलाई के लिए प्रतिबद्ध हैं?

क्या समझा? क्या जाना?

क्या आप इस हिस्से में (पृष्ठ 83 से 85 तक) दिए गए कार्टूनों में दर्शायी गई चुनौतियों की पहचान कर सकते हैं? राजनीति में धन तथा बल के दुरुपयोग को रोकने के क्या तरीके हैं?

दलों को कैसे सुधारा जा सकता है?

इन चुनौतियों का सामना करने के लिए ज़रूरी है कि राजनीतिक दलों में सुधार हो। ऐसे में सवाल यह उठता है कि क्या राजनीतिक दल सुधरने को तैयार हैं? अगर वे तैयार नहीं हैं तो क्या उन्हें सुधरने को मजबूर किया जा सकता है? दुनिया-भर के नागरिक इन सवालों को लेकर परेशान हैं। ये ऐसे सवाल हैं जिनका जवाब आसान नहीं है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में आखिरी फ़ैसला राजनेता ही करते हैं जो विभिन्न राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व करते हैं। लोग उनको बदल सकते हैं पर उनकी जगह फिर नए नेता ही लेते हैं। अगर वे सभी सुधरना नहीं चाहते हैं तो कोई उनको सुधरने के लिए कैसे मजबूर कर सकता है?

आइए, अपने देश में राजनीतिक दलों और इसके नेताओं को सुधारने के लिए हाल में जो प्रयास किए गए हैं या जो सुझाव दिए गए हैं उन पर गौर करें।

- विधायकों और सांसदों को दल-बदल करने से रोकने के लिए संविधान में संशोधन किया गया। निर्वाचित प्रतिनिधियों के मंत्रीपद या पैसे के लोभ में दल-बदल करने में आई तेज़ी को देखते हुए ऐसा किया गया। नए कानून के अनुसार अपना दल-बदलने वाले सांसद या विधायक को अपनी सीट भी गँवानी होगी। इस नए कानून से दल-बदल में कमी आई है पर इससे पार्टी में विरोध का कोई स्वर उठाना और भी मुश्किल हो गया है पार्टी नेतृत्व जो कोई फ़ैसला करता है,

बात बोले भेद खोले

दल-बदल : विधायिका के लिए किसी दल-विशेष से निर्वाचित होने वाले प्रतिनिधि का उस दल को छोड़कर किसी अन्य दल में चले जाना।

क्या आप इस तरह से राजनीतिक दलों को सुधारने का समर्थन करते हैं?

सांसद और विधायक को उसे मानना ही होता है।

- उच्चतम न्यायालय ने पैसे और अपराधियों का प्रभाव कम करने के लिए एक आदेश जारी किया है। इस आदेश के द्वारा चुनाव लड़ने वाले हर उम्मीदवार को अपनी संपत्ति का और अपने खिलाफ़ चल रहे आपराधिक मामलों का ब्यौरा एक शपथपत्र के माध्यम से देना अनिवार्य कर दिया गया है। इस नयी व्यवस्था से लोगों को अपने उम्मीदवारों के बारे में बहुत सी पक्की सूचनाएँ उपलब्ध होने लगी हैं, पर उम्मीदवार द्वारा दी गई सूचनाएँ सही हैं या नहीं, यह जाँच करने की कोई व्यवस्था नहीं है। अभी तक हम यह बात भरोसे से नहीं कह सकते कि इस व्यवस्था के बन जाने के बाद से राजनीति पर अमीरों और अपराधियों का प्रभाव घटा है या नहीं।
- चुनाव आयोग ने एक आदेश के जरिए सभी दलों के लिए सांगठनिक चुनाव कराना और आयकर का रिटर्न भरना ज़रूरी बना दिया है। दलों ने ऐसा करना शुरू भी कर दिया है, पर कई बार ऐसा सिर्फ़ खानापूरी करने के लिए होता है। यह बात अभी नहीं कही जा सकती कि इससे राजनीतिक दलों में अंदरूनी लोकतंत्र मज़बूत हुआ है। इनके अलावा राजनीतिक दलों में सुधार के लिए अक्सर कई कदम सुझाए जाते हैं :
- राजनीतिक दलों के आंतरिक कामकाज को व्यवस्थित करने के लिए कानून बनाया जाना चाहिए। सभी दल अपने सदस्यों की सूची रखें, अपने संविधान का पालन करें, पार्टी में विवाद की स्थिति में एक स्वतंत्र प्राधिकारी को पंच बनाएँ और सबसे बड़े पदों के लिए खुला चुनाव कराएँ–यह व्यवस्था अनिवार्य की जानी चाहिए।
- राजनीतिक दल महिलाओं को एक खास न्यूनतम अनुपात में (करीब एक तिहाई) ज़रूर टिकट दें। इसी प्रकार दल के प्रमुख पदों पर भी औरतों के लिए आरक्षण होना चाहिए।
- चुनाव का खर्च सरकार उठाए। सरकार दलों को चुनाव लड़ने के लिए धन दे। यह मदद पेट्रोल, कागज़, फ़ोन वगैरह के रूप में भी हो सकती है या फिर पिछले चुनाव में मिले मतों के अनुपात में नकद पैसा दिया जा सकता है।

राजनीतिक दलों ने अभी तक इन सुझावों को नहीं माना है। अगर इन्हें मान लिया गया तो संभव है कि इनसे कुछ सुधार हो। लेकिन हर राजनीतिक समस्या के लिए महज़ कानूनी समाधान की बात करते हुए हमें सावधान रहना चाहिए। दलों को ज़रूरत से ज़्यादा नियमों से जकड़ना नुकसानदेह भी हो सकता है। इससे सभी दल कानून को दरकिनार करने का तरीका ढूँढ़ने लगेंगे। इसके अलावा राजनीतिक दल खुद भी ऐसा कानून पास करने पर सहमत नहीं होंगे जिसे वे पसंद नहीं करते।

दो और तरीके हैं जिनसे राजनीतिक दलों को सुधारा जा सकता है। पहला तरीका है राजनीतिक दलों पर लोगों द्वारा दबाव बनाने का। यह काम चिट्‌ठियाँ लिखने, प्रचार करने और आंदोलनों के जरिये किया जा सकता है। आम नागरिक,

बात बोले भेद खोले

शपथपत्र : किसी अधिकारी को सौंपा गया एक दस्तावेज़! इसमें कोई व्यक्ति अपने बारे में निजी सूचनाएँ देता है और उनके सही होने के बारे में शपथ उठाता है। इस पर सूचना देने वाले के हस्ताक्षर होते हैं।

© NCERT not to be republished

दबाव समूह, आंदोलन और मीडिया के माध्यम से यह काम किया जा सकता है। अगर दलों को लगे कि सुधार न करने से उनका जनाधार गिरने लगेगा या उनकी छवि खराब होगी तो इसे लेकर वे गंभीर होने लगेंगे। सुधार का दूसरा तरीका है सुधार की इच्छा रखने वालों का खुद राजनीतिक दलों में शामिल होना। लोकतंत्र की गुणवत्ता लोकतंत्र में लोगों की भागीदारी से तय होती है। अगर आम नागरिक खुद राजनीति में हिस्सा न लें और बाहर से ही बातें करते रहें तो सुधार मुश्किल है। खराब राजनीति का समाधान है ज़्यादा से ज़्यादा राजनीति और बेहतर राजनीति। हम इस बात की चर्चा फिर से आखिरी अध्याय में करेंगे।

प्रश्नावली

1. लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की विभिन्न भूमिकाओं की चर्चा करें।
2. राजनीतिक दलों के सामने क्या चुनौतियाँ हैं?
3. राजनीतिक दल अपना कामकाज बेहतर ढंग से करें, इसके लिए उन्हें मज़बूत बनाने के कुछ सुझाव दें।
4. राजनीतिक दल का क्या अर्थ होता है?
5. किसी भी राजनीतिक दल के क्या गुण होते हैं?
6. चुनाव लड़ने और सरकार में सत्ता सँभालने के लिए एकजुट हुए लोगों के समूह को .... कहते हैं।
7. पहली सूची [संगठन/दल] और दूसरी सूची (गठबंधन/मोर्चा) के नामों का मिलान करें और नीचे दिए गए कूट नामों के आधार पर सही उत्तर ढूँढें :

	सूची I	**सूची II**
1.	इंडियन नेशनल काँग्रेस	(क) राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन
2.	भारतीय जनता पार्टी	(ख) क्षेत्रीय दल
3.	कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सिस्ट)	(ग) संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन
4.	तेलुगु देशम पार्टी	(घ) वाम मोर्चा

	1	2	3	4
(क)	ग	क	ख	घ
(ख)	ग	घ	क	ख
(ग)	ग	क	घ	ख
(घ)	घ	ग	क	ख

8. इनमें से कौन बहुजन समाज पार्टी का संस्थापक है?
   (क) कांशीराम
   (ख) साहू महाराज

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

(ग) बी.आर. आंबेडकर

(घ) ज्योतिबा फुले

9. भारतीय जनता पार्टी का मुख्य प्रेरक सिद्धांत क्या है?

(अ) बहुजन समाज

(ब) क्रांतिकारी लोकतंत्र

(स) समग्र मानवतावाद

(द) आधुनिकता

10. पार्टियों के बारे में निम्नलिखित कथनों पर गौर करें :

(अ) राजनीतिक दलों पर लोगों का ज़्यादा भरोसा नहीं है।

(ब) दलों में अक्सर बड़े नेताओं के घोटालों की गूँज सुनाई देती है।

(स) सरकार चलाने के लिए पार्टियों का होना ज़रूरी नहीं।

इन कथनों में से कौन सही है?

(क) अ, ब और स (ख) अ और ब (ग) ब और स (घ) अ और स

11. निम्नलिखित उद्धरण को पढ़ें और नीचे दिए गए प्रश्नों का जवाब दें :

मोहम्मद यूनुस बांग्लादेश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री हैं। गरीबों के आर्थिक और सामाजिक विकास के प्रयासों के लिए उन्हें अनेक अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिले हैं। उन्हें और उनके द्वारा स्थापित ग्रामीण बैंक को संयुक्त रूप से वर्ष 2006 का नोबेल शांति पुरस्कार दिया गया। फ़रवरी 2007 में उन्होंने एक राजनीतिक दल बनाने और संसदीय चुनाव लड़ने का फ़ैसला किया। उनका उद्देश्य सही नेतृत्व को उभारना, अच्छा शासन देना और नए बांग्लादेश का निर्माण करना है। उन्हें लगता है कि पारंपरिक दलों से अलग एक नए राजनीतिक दल से ही नई राजनीतिक संस्कृति पैदा हो सकती है। उनका दल निचले स्तर से लेकर ऊपर तक लोकतांत्रिक होगा।

नागरिक शक्ति नामक इस नये दल के गठन से बांग्लादेश में हलचल मच गई है। उनके फ़ैसले को काफ़ी लोगों ने पसंद किया तो अनेक को यह अच्छा नहीं लगा। एक सरकारी अधिकारी शाहेदुल इस्लाम ने कहा, "मुझे लगता है कि अब बांग्लादेश में अच्छे और बुरे के बीच चुनाव करना संभव हो गया है। अब एक अच्छी सरकार की उम्मीद की जा सकती है। यह सरकार न केवल भ्रष्टाचार से दूर रहेगी बल्कि भ्रष्टाचार और काले धन की समाप्ति को भी अपनी प्राथमिकता बनाएगी।"

पर दशकों से मुल्क की राजनीति में रुतबा रखने वाले पुराने दलों के नेताओं में संशय है। बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी के एक बड़े नेता का कहना है : "नोबेल पुरस्कार जीतने पर क्या बहस हो सकती है पर राजनीति एकदम अलग चीज़ है। एकदम चुनौती भरी और अक्सर विवादास्पद।" कुछ अन्य लोगों का स्वर और कड़ा था। वे उनके राजनीति में आने पर सवाल उठाने लगे। एक राजनीतिक प्रेक्षक ने कहा, "देश से बाहर की ताकतें उन्हें राजनीति पर थोप रही हैं।"

क्या आपको लगता है कि यूनुस ने नयी राजनीतिक पार्टी बनाकर ठीक किया?

क्या आप विभिन्न लोगों द्वारा जारी बयानों और अंदेशों से सहमत हैं? इस पार्टी को दूसरों से अलग काम करने के लिए खुद को किस तरह संगठित करना चाहिए? अगर आप इस राजनीतिक दल के संस्थापकों में एक होते तो इसके पक्ष में क्या दलील देते?

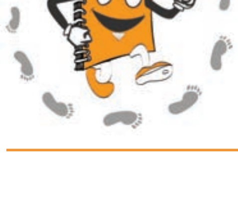

© NCERT not to be republished